IJCRT.ORG ISSN : 2320-2882

INTERNATIONAL JOURNAL OF CREATIVE RESEARCH THOUGHTS (IJCRT)

An International Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

आर्थिक संवेदना और राजनीतिक संवेदना का संगम : नंदकिशोर आचार्य का काव्य

डॉ. मुकेश कुमार शर्मा
असिस्टेंट प्रोफेसर, स्नातकोत्तर हिंदी विभाग
महात्मा गाँधी गवर्नमेंट आर्ट्स कॉलेज, माही (यू.टी.पुदुच्चेरी)-673311
सम्बद्ध विश्वविद्यालय-
पॉण्डिचेरी विश्वविद्यालय, कालपेट, पॉण्डिचेरी-605014
भारत
sharmamk1985@gmail.com

शोध सार (Abstract)-

चार पुरुषार्थों में 'अर्थ' को दूसरा स्थान दिया गया है। मानव समाज में जब से वस्तु विनिमय के स्थान पर अर्थ या धन के रूप में वस्तुओं का क्रय-विक्रय एवं व्यापार करना, प्रारंभ किया है तब से अर्थशास्त्र की नींव पड़ी। इस अर्थ की धूरी पर ही सम्पूर्ण विश्व के सभी देशों का व्यापार-व्यवसाय चल रहा है। मुद्रा के प्रचलन से लेकर अद्यतन समय तक इसने स्वयं हमेशा मजबूती के साथ आगे कदम बढ़ाए हैं। जब से मनुष्य से अधिक अर्थ को महत्त्व दिया जाने लगा तब से मनुष्य मानवता विहीन एक यंत्र मात्र बनकर रह गया है। प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से प्रत्येक काल के प्रत्येक प्राणी का जीवन धन के बिना चलना कठिन रहा है।

समकालीन आर्थिक संवेदना का जो परिदृश्य हमारे समक्ष उपस्थित हो रहा है उसमें अर्थ के प्रभाव से मानवीय जीवन मूल्यों में अनवरत परिवर्तन, धन की धूरी के चारों ओर ही संसार का गतिशील चक्र निरंतर प्रवाहमान है। धनाभाव में मनुष्य ही नहीं राष्ट्रीय विकास भी अवरूद्ध-सा हो जाता है। यह काल अर्थ की प्रधानता का काल है, औद्योगिकीकरण के प्रभाव स्वरूप मानवीय जीवन के आचरण एवं तौर-तरिकों में आमूलचूल परिवर्तन हुआ है, मानवीय मूल्य भी धन के समक्ष बौने महसूस होने लगे हैं। बढ़ते उपयोगितावाद में धन के बल पर ईमान, विश्वास सहज बिकते हुए अनुभूत होते हैं। जिसमें आज का मानव सम्पूर्ण जीवन को थोड़े समय में ही भोग लेने की लालसा एवं अर्थ के चक्कर में इधर-से- उधर घनचक्कर की तरह घूम रहा है। जिसमें मानवता दिवार के किसी अँधेरे कोने में मुँह छुपाए खड़ी महसूस होती है।

राजनीतिक संवेदना का स्वरूप ज्ञात एवं संवेदित करने के लिए साहित्य में शब्दों का सहारा लिया जाता है। अनुभव का स्वरूप शब्द के भीतर ही बने भावों का सौन्दर्याभिरूचि सहित भाषा के अनुप्रयोग ही इस संवेदना को सम्प्रेषित करता है। हृदय के तार झंकृत करने के लिए आवश्यक इस संवेदना में कोमलता, सहृदयता, दया, करुणा इत्यादि का प्रभाव अपनी स्वार्थपूर्ति के लिए राजा-महाराजा-शासक-राजनेता आदि अनादिकाल से करते आए है।

समकालीन समाज में राजनीति संवेदना इतनी हावी हो गई है कि इसके बारे में विचार किए बिना सामाजिक-सांस्कृतिक-ऐतिहासिक आदि संवेदना के विविध रूपों पर विचार करना भी अधूरा-सा लगता है। इस संवेदना में अराजक तत्त्वों का बढ़ता प्रभाव, चुनाव एवं वोट की राजनीति में गिरते मानवीय मूल्य, मौकापरस्ती, राजनीतिक पार्टियों की अवसरवादी प्रवृत्ति, थोथे भाषणों के चमत्कार से सत्ता पाना, गुटबाजी में पिसता समाज, राजनीतिक अधिकारों का अपनी सुविधानुसार प्रयोग, जन-समुदाय का बढ़ता आक्रोश व अविश्वास, आतंकवाद, पग-पग पर युद्ध की विभिषिका की आहट सुनाई देना आदि से विलग रखते हुए राष्ट्र को एकता के सूत्र में बाँधकर निरन्तर प्रगति के पथ पर आगे बढ़ते रहना सबसे बड़ी चुनौती आज के राजनेताओं, प्रशासकों, समाजवेताओं, साहित्यकारों, समाज चिंतकों आदि पर हैं। आर्थिक-राजनीतिक संवेदना का संगम नंदकिशोर आचार्य के कव्यालोक में प्रतिफिलित होता अनुभव किया जाता है।

बीज-शब्द (Key-Word)- भागमभाग, अन्योन्याश्रित, इन्तज़ार, कव्यालोक, सुकूँन, झकझोरा, भावालोक आदि।

आलेख (Artical)-

अर्थ और राजनीति का अन्योन्याश्रित सम्बन्ध अनादिकाल से रहा है। राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय संबंधों को प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से दोनों ने संवेदना के धरातल पर प्रभावित किया है। एक देश की सीमाओं की बात हो या एकाधिक देशों के मध्य व्यापारिक संबंधों को इन्होंने संवेदित करने का कार्य किया है। अनादिकाल से लेकर समकालीन मानव समाज तक अनेक प्रकार इनसे प्रभावित रहा है।

नंदकिशोर आचार्य, 'अज्ञेय' द्वारा सम्पादित चौथा तार सप्तक में राजस्थान के एकमात्र प्रतिनिधि कवि है। आपका काव्य संसार संवेदना के विविध सोपानों को लक्षित और अभिव्यंजित करता रहा है। आपको अनेक सम्मानों से नवाजा गया हैं जिसमें से प्रमुख 'वह एक समुद्र था' (1982) कविता-संग्रह पर वर्ष 1986-87 के लिए राजस्थान साहित्य अकादमी, उदयपुर का सर्वोच्च 'मीरा सम्मान' प्राप्त हुआ। 'रचना का सच' (1986) निबंध संग्रह पर 1994 के लिए के. के. बिड़ला फाउण्डेशन का चौथा 'बिहारी पुरस्कार' प्रदान किया। 'अखिल भारतीय प्ले लेखक सम्मान', 'भुवनेश्वर सम्मान', 'संगीत नाटक अकादमी पुरस्कार', 'भुवालका पुरस्कार (2001)', 'साहित्य सम्मान', 2009 का 'नरेश मेहता स्मृति वाङ्मय सम्मान' इनके चर्चित ग्रंथ 'संस्कृति की सामाजिकी' के लिए, 2011 का 'सुब्रह्मण्यम् भारती पुरस्कार', 2012 के 'महाराणा कुम्भा सम्मान' एवं 'पं. विद्यानिवास स्मृति सम्मान', 'संगीत नाटक अकादमी, दिल्ली द्वारा 2015 का 'अकादमी अवार्ड', 'प्रयास संस्थान चुरू द्वारा वर्ष 2016 के 'डॉ. घासीराम वर्मा पुरस्कार' इनके कविता-संग्रह 'आकाश भटका हुआ' (2015) के लिए दिया गया। जो इनके रचनाकर्म के प्रति गहन आस्था, मानवीय मूल्यों की प्रतिस्थापक विचारधाराओं, वैश्वीकरण के दौर में गाँधीवादी विचारों में ही समाज का हित साधन मानते हुए समायोजन के पक्षधर एवं संस्कृति के पुनरान्वेषण के चिंतक आचार्य जी के रचना संसार की श्रेष्ठता को प्रमाणित करता है।

'जल है जहाँ' (1980), 'वह एक समुद्र था' से प्रारम्भ करके *'केवल एक पत्ती ने', 'छीलते हुए अपने को', 'आकाश भटका हुआ' (2015), 'हवा की मंज़िल नहीं कोई' (2016)* इत्यादि पन्द्रह कविता संग्रहों में धारा की साकार अभिव्यक्ति देख सकते हैं। पाँच कविता चयन, 'तथागत' उपन्यास, नौ नाटक, साहित्यालोचन, इतिहास एवं गाँधी चिंतन, शिक्षा, मानवाधिकार एवं संस्कृति सम्बन्धी अनेक चिंतन ग्रंथ प्रकाशित हो चुके हैं जिनमें आर्थिक और राजनीतिक संवेदना लक्षित और अभिव्यंजित हुई है। *'अपराह्न'* कविता चयन में आचार्यजी की सभी कविताओं का अध्ययन किया जा सकता है।

आर्थिक संवेदना :-

अनादिकाल से मनुष्य की दैहिक, दैविक, भौतिक आवश्यकताओं की पूर्ति का मूलाधार अर्थ, आधुनिक परिवेश में रिश्तों की अहमियत को तार-तार करता हुआ अपने विद्रुप रूप में प्रत्याक्षांकित है। दुर्भिक्ष, अतिवृष्टि, अनावृष्टि, रोजगार, सोहरत की लिप्सा में मनुष्य आज विसंगतिमय जीवन तक आ पहुँचा है। वैश्वीकरण के इस दौर में तो रिश्तों के मानदण्ड ही अर्थाधारित हो गए है। आचार्य जी स्वयं आर्थिक विचलताओं के भोक्ता होने के कारण व्यक्तिश:, सांस्कृतिक, सामाजिक, प्राकृतिक, ऐतिहासिक-राजनीतिक चेतनाओं को अर्थ से परिवेष्ठित करके उभारने में एक प्रासंगिक कवि रहे हैं।

'जल है जहाँ' कविता संग्रह की कविता 'बनो मत' के मध्यांश में ईश्वर द्वारा बखेड़ा खड़ा करके लोगों को भूखा-प्यास रखकर उन्हें आर्थिक रूप से कमजोर करके जैविक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए प्रयत्नशील बताया है -

> *और तुम्हारा अहं तुष्ट हुआ भी / पर वहीं तुम चूक गये, प्यारेलाल / जब मेरा सिर / तुम्हारे चरणों पर टिका / तुम नहीं समझ पाये / कि यह मैं नहीं / भय है -तुम्हारा ही दिया- / जिसे सहारा चाहिए / जैसे भूख को रोटी / प्यास को पानी।* [1]

'वह एक समुद्र था' कविता संग्रह की कविता 'समवेत स्वर में' के अन्तर्गत कवि ने पसीने से तरबतर (भीगी हुई) स्त्री द्वारा अपनी ओढ़नी को कमर में कसकर बाँधने के पश्चात अपने कोमल हाथों से कठोर पत्थर को आगे धकेलने को प्रयासरत महिला के साहसी व्यक्तित्व, कर्मठता एवं कर्मलीन स्त्री के सौन्दर्य को अमर सौन्दर्य कहते हुए लिखते हैं कि-

> *तुफान मे उठती तरंग सी / तन गई है देह / पिंडलियों की सुघड़ता में फूटा संकल्प, / बाहों की लचक में जागती बिजलियाँ,/ दूध का कोष है जो मृदुल वक्ष, / उभर आया है चुनौती सा : / ताम्बई होते जा रहे साँवले चेहरे पर / झलकता इतिहास का वह मानवी आवेग !* [2]

इसी कविता में आगे कर्म के सौन्दर्य को रेखांकित करने के साथ, सौन्दर्य की अमरता कर्म में लीन स्त्री के तम तमाते चेहरे और मानवीय आवेगों में सहज छलकने को संवेदित करते हुए मूल पात्र की आत्मा की आवाज़ को जन-मन तक पहुँचाने का माद्दा रखते हुए कवि ने चित्रित किया-

काश ! गढ़ पाता मैं इसकी मूर्ति / या बना सकता चित्र / कुछ न कुछ तो / बाँध ही लेता / अमर सौन्दर्य के इस फूटते क्षण को / किन्तु कवि हूँ मैं / इसलिए अपना स्वर मिलाता हूँ / उसी समवेत स्वर में / जो तुम्हारी आत्मा में गूँजता है...[3]

'शब्द भूले हुए' कविता संग्रह की कविता 'सपनों की गिट्टी' में कर्मशील स्त्री का वर्णन किया हैं। 'इन्तिजार में' कविता में चाय के थेले या लॉरी पर काम करने वाले बच्चे का वर्णन किया है जो पढ़ने की उम्र में गिलासें धोने के काम में लगा हुआ है। आखिर कब तक ऐसा ही चलता रहेगा? कब इन्हें भी शिक्षा मिलेगी ? 'कोहे-नूर' कविता में रेगिस्तान में रेत के डूँगर जो पहले केवल ढेर मात्र थे इनसे तेल निकलने के बाद ये कोहे-नूर जैसे अमूल्य हो इस प्रकार की अभिव्यंजना हुई है। 'आखिरी लारी' कविता में चाय की लॉरी पर काम करने वाले बच्चे किस प्रकार रात को सूने होटल के किनारे को अपना बसेरा बनाकर फुटपाथ पर सोने को विवश है। इनका मालिक दिनभर एवं देर रात तक काम तो करवाता है पर रहने की कोई व्यवस्था क्यों नहीं करता? इस परिदृश्य को चित्रित करते हुए लिखा है कि-

कोई मुसाफिर नहीं उतरा / आख़िरी लारी से भी / कौन आता है इस मौसम में- / कुछ देर सीने में घुटन डाले / बैठा वह ताकता रहा / बंद चायवाले की / बुझी हुई भट्टी को / फिर सर झुकाये चल पड़ा / भाँय-भाँय करते सुने होटल की ओर / छोड़ भरोसे पर उसके ही जिस को / नीचे चलें गये हैं मालिक।[4]

'आती है जैसे मृत्यु' कविता संग्रह की कविता 'बेघर हुआ जाता है' कविता में पुराने बीकानेर शहर की ईमारतों के सूनेपन और नई कॉलोनियों और कॉम्पलेक्स में रहकर स्वयं को सुविधा भोगी और अमीर समझने वालों के उपेक्षापूर्ण रवैये से पुराने बीकानेर के बेघर होने का सूक्ष्मांकन किया है। 'मढ़िया' कविता में गोबर पर पत्थर डालकर अपना हक जताने वाली संवेदना व्यंजित हुई हैं। 'समतल नहीं है शहर' कविता में प्रतिकार्थ रूप से आर्थिक असमानता, परिश्रमी व्यक्तियों के जीवन की कठिनाइयों, संघर्ष भरे जीवन को संवेदित करते हुए लिखा है कि जहाँ वो समतल दिखता भी हो पर होता नहीं है -

जहाँ वैसा दिखता भी है / वहाँ पर पुल है / ढलाई और चढ़ाई के बीच का पुल / थम कर जहाँ दो पल / लगाता है शहर ज़र्दा : /आराम से रखकर होठों के बीच / फिर पकड़ लेता रास्ता अपना / बेफ़िक्र ठावस भरा-/ हर कदम जब / या तो चढ़ाई है या उतराई / कहीं भी समतल नहीं है शहर।[5]

'बेलने लगती अपना पापड़' कविता में सूर्योदय से सूर्यास्त तक पापड़ बेलने वाली स्त्री का चित्रण किया है जो बीच में पल दो पल विश्राम करके, फटे आँचल से पसीना पोंछ कर, अपनी सुध लेकर फिर सिर झुकाकर उमस भरे वातावरण में पापड़ बलेने लगती है।

'चाँद आकाश गाता है' कविता संग्रह की कविता 'कहाँ जिया' में ईश्वर द्वारा दिए गये जीवन को अपनी आर्थिक आवश्यकताओं, पारिवारिक जिम्मेदारियों, जैविक आवश्यकताओं की पूर्ति करने के लिए खपा दिया इसका सूक्ष्मांकन करते हुए लिखा है कि -

कहाँ जिया / जीवन / जो तुमने दिया / मैं समझा किया / भेंट उस को / पर तुमने माना / कर्ज़ उसे / मय सूद वसूल लिया / पसीना नहीं / तुम्हारा दिया / रोम-रोम ब रहा / बिलखता / करता / जिया ! जिया ![6]

'इतनी शक्लों में अदृश्य' कविता संग्रह की कविता 'बच रहा है जो' कविता में पेड़ के काटे जाने के बाद उसका प्रत्येक भाग मनुष्य के किसी न किसी काम आता रहता है। कभी लाठी बनकर, तो कभी कुर्सी-मेज एवं खाट बनकर इतना ही नहीं बचा हुआ बुरादा और छिलके भी किसी अँगीठी के इन्तज़ार में है -

हरा भी था कभी / कटकर हो गया जो / काठ- / किसी की कुर्सी- / किसी की मेज / किसी का खाट / लाठी भी किसी की कभी / होता रहा है वह / कटते-छिलते बच रहा है जो / -बुरादा-थोड़ा, कुछ छिलके- / वह भी इन्तज़ार में है / किसी की बोरसी के लिए।[7]

'छीलते हुए अपने को' कविता-संग्रह की कविता 'फेर' में व्यक्ति के द्वारा धन कमाने की लालसा दिन-पर-दिन बढ़ती चली जा रही है उसे 'निन्यानवें के फेर' में पड़ने वाले मुहावरे से इसकी आर्थिक संवेदना की सार्थक अभिव्यंजना हुई है। 'जाल में है हरा' कविता में कवि ने धन कमाने के चक्कर मे पड़ने के कारण किसी को प्राकृतिक सौन्दर्य को निहारने की फ़ुर्सत कहाँ? उसकी भागमभाग वाली ज़िन्दगी में प्रकृति कहीं पीछे छूट गई जिसे प्रतिकात्मक रूप से आर्थिक सम्पन्नता और प्राकृतिक विपन्नता को संवेदित करते हुए लिखा है कि-

पेड़ हैं / पर नीचे हैं सब / ऊँची इमारतों से / दोनों ओर सड़क के / खिल रहे हैं फूल / पल-दो पल रुक कर देख ले कोई- / भागती गाड़ियों को नहीं पर फ़ुरसत / वह भी हड़बड़ी में है / जिसे पार करनी है पैदल सड़क / टावरों के तारों के जाल में है / हरा / और पथ पार करता आदमी / पैदल।[8]

'मुरझाने को खिलाते हुए' कविता संग्रह की कविता 'सुकून है घर' में कवि ने अर्थ के प्रभाव के कारण घरों से दिन-दिन भावात्मकता एवं संवेदनाओं के सोते के सूखते जाने और धन के बढ़ते प्रभाव के कारण पारिवारिक कलहों से घरों में सुकून न मिलने के कारण वे बाड़े सदृश्य आभासित हुए है। घर की सार्थकता उसके गृही होने में है इसकी ओर इशारा करते हुए लिखा है कि-

सुकूँन है घर / मकाँ में नहीं / मकीं से मिलता है जो / मेरे घर में पर कोई/ मकीं नहीं है / तलाश ही किये हुए है घर / मगर फिर भी निरन्तर। [9]

राजनीतिक संवेदना :-

राजनीति, साहित्य का संस्पर्श न रही हो लेकिन सत्ता ने साहित्यिक मन और सामाजिक को झकझोरा ज़रूर है। जीवन के सभी पहलू कहीं न कहीं राजनीति के गलियारों से प्रभावित रहे है। आचार्य जी न राजनीति के न समर्थक है न विरोधी अपितु उन्होंने अपनी कविताओं में लोक-कल्याणकारी सत्ता के पक्ष का खुलकर समर्थन किया है, प्रत्यक्षत: नहीं परोक्षत:, स्थूलत: नहीं सूक्ष्मत:।

'जल है जहाँ' कविता संग्रह की कविता 'वह रंग' में आपातकालीन स्थिति में संजय गाँधी के बीकानेर आने पर लिखी गई इस कविता में ख़ाकी के प्रभाव को रेखांकित करते हुए यहाँ की जनता के जीवन में कैसे अन्धकार, दु:ख, निराशा, भय आदि छाये उनको प्रतीकार्थ रूप में व्यंजित करते हुए लिखा कि एक रंग में दूसरा रंग हमेशा छुपा होता है, कोई भी बेरंग नहीं होता। 'तो तुम्हें क्या' कविता भी आपातकालीन स्थिति में जनता की दयनीय स्थिति का चित्रण करती है जिसमें हमेशा जनता ही पिसती है सरकार या शासक हमेशा मोझ में जीते हैं। सरकार के विरूद्ध आवाज़ उठाने वाले को मौत के घाट उतारना व क्रूरतापूर्ण बर्ताव करना सामान्य बात थी। जुलूस निकालने वालों के सामने चीखने का नतिजा क्या हुआ? उसे रेखांकित करते हुए लिखा है कि -

"बन्द करो यह जुलूस, यह बाजा / तुम देवता नहीं, नंगे हो राजा / तुम" / वह इतना ही बोल पाया / कि लोगों को सिर्फ़ वह दीखा / कि वह अब वहाँ नहीं था / वहाँ तो पड़ा था कुछ खून सरीखा। / पर उस गूँज को, प्रति गूँज को / सारे जुलूस का सारा शोर / अपने में एक भी पल नहीं घोल पाया। [10]

जागरूक जनता का सिर झुकाकर जुल्म सहते रहना एवं प्रतिकार न करना कवि को गहरे तक सालता है और वे गहरी प्रश्नाकुलता की शैली में कहते हैं -

हाथी पर सवार राजा का सिर / शर्म से गड़ा जा रहा था- / पर लोगों, तुम सब के सिर क्यों झुक गये थे। [11]

'बर्फ़-सिरोपा' कविता में प्रतिकार्थ रूप में 'बर्फ़' को आपातकाल के दौरान सबके मौन रहकर सब-कुछ सहते जाना और प्रतिकार न करना, समाज व राजनीति के दोनों पाटों के मध्य जन सामान्य के पिसते जाने का वर्णन किया है जो बाहर-बाहर से शांति का दिखावा कर भीतर-भीतर जनता को प्रताड़ित करते हैं।

'वह एक समुद्र था' कविता संग्रह की कविता 'एकाएक नहीं उठा था बवण्डर' का प्रतिकार्थ है कि परिवर्तन की आँधी या बवण्डर के उठने के लिए कई महिनों या वर्षों से जनता के शोषण एवं दमन ने बवण्डर का रूप धारण कर तहस-नहस किया है। 'बेआब क्यों है आसमाँ' कविता में राजनेताओं द्वारा मजदूर वर्ग, मेहनतकश समुदाय पर ध्यान न देने और अपनी ही धुन में बढ़ते रहने के कारण सामान्य जन का सुख-समृद्धि और चेन जाने कहाँ खो गया है? 'अँधों पर लाठियाँ' कविता में कानून के शासन की दुहाई देकर जन सामान्य को पीड़ित करना और यह कहना कि हम सभ्य है ये कैसी विडम्बना है ? 'कानून अंधा होता है' की सार्थक अभिव्यक्ति इस कविता में हुई है -

हम आदमी और आदमी में कोई फर्क़ नहीं करते / क्योंकि हम सभ्य है ! / वे गये ही क्यों थे उधर / जो आम रास्ता नहीं है / जो सिर्फ़ साँपों के लिए बनाया गया है/ कि उन्हें आदमियों से बचाया जा सके / - खास तौर पर अन्धों से / कि उनके पाँव साँपों को कुचल न दे कहीं ! [12]

इसे पढ़कर अज्ञेय की 'साँप' कविता सहज ही याद आती है-

साँप ! / तुम सभ्य तो हुए नहीं / नगर में बसना / भी तुम्हें नहीं आया। / एक बात पूछूँ--(उत्तर दोगे?) / तब कैसे / सीखा डँसना-- / विष कहाँ पाया?[13]

'आती है जैसे मृत्यु' कविता संग्रह की कविता 'गलियाँ : चौक' में जन सामान्य द्वारा चौक में एकत्रित होकर रोज शाम को बैठकर चर्चाएँ करना, विचार-विनिमय और संवाद करना और कभी-कभी राजनीतिक बहसें होना अब वो कहाँ? व्यंग्यार्थ है कि वो आत्मीयता, आत्मिक संवाद, वैचारिक उद्वेलन का समय कहाँ ?-

गलियाँ भी है : चौक भी। / गलियाँ चौक में आकर / नहीं मिलती अब / उस को बाँटती हैं-/ हर सू जोड़ती थीं जो / टहलते हुए / दूसरे चौक से ख़ुद को / अब उन को काटती है / व्यग्र भागते हुए सरपट वाहनों पर। / गलियाँ अब भी हैं : चौक भी। [14]

'अन्य होते हुए' कविता संग्रह की कविता 'मुखौटा' मे राजनेताओं द्वारा भिन्न-भिन्न प्रकार के मुखौटों को धारण करके जनता को लूटने, ठगने और झूठी तसल्ली दिलाने से पीछे नहीं रहने का संकेत किया है। राजनीतिज्ञों पर व्यंग्य करते हुए लिखा है कि -

उतार कर रख देता हूँ जिसे / एक ओर / स्वाँग के बाद / मुखौटा है / या असली वही चेहरा है- / कुछ देर ख़ातिर / जिसमें महसूस करता हूँ /अपना होना। / और चेहरा / जिसे तुम मेरा कहते हो / मुखौटा है दरअस्ल/ ओढ़े रहता हूँ हर वक्त / अपने होने को / स्वाँग करता हुआ। [15]

'चाँद आकाश गाता है' कविता संग्रह की कविता 'ख़ुद के अँधेरों में' के अन्तर्गत कवि ने सांकेतिक शैली में राजनेताओं के दोहरे रूप की ओर संकेत किया है जिसमें वे दो अलग-अलग प्रकार की ज़िन्दगी जीते हैं -

चीज़ें क्या वही होती हैं / अँधेरों में / उजालों में होती- हैं / जैसी?/ ख़ुद अपने से पूछो : / मैं क्या वही होता हूँ / तुम्हारे उजाले में जब / आता हूँ / ख़ुद के अँधेरो में ? [16]

'इतनी शक्लों में अदृश्य' कविता संग्रह की कविता 'आग' में आग का प्रतिकार्थ विद्रोही भावनाओं से युक्त ओजस्वी या भड़काऊ भाषण लिया जाए तो यहाँ पर भावार्थ होगा की विद्रोही भावनाओं से युक्त भाषण से व्यक्ति का स्वभाव उग्र होने से जो तबाही होती है वह विभिन्न दंगों-फसादों के रूप में समकालीन समाज में फैलती ही रहती है ये आग। 'कल जब नहीं' कविता में बताया है कि सत्ता हो या डर उससे निडर होकर जीना ही सच्चा जीवन है -

सत्ता समय की / या डर / जो भी है / मेरे होने से है / कल जब नहीं / मिलूँगा उसे / समय क्या कर लेगा / मेरा ? [17]

'माने हुए बैठे हैं' में नेताओं की उस दुनिया की ओर संकेत किया है जिसमें सामान्य जन नदारद है। जिस दुनियाँ में मै, तुम या साधारण मनुष्य के सरोकारों को कोई स्थान न देकर केवल उनकी मन मुताबिक दुनियाँ इन राजनेताओं ने बनाई है जिसमें वे ही वे दिखाई देते हैं। आमजन उससे नदारद है लेकिन आमजन इस भ्रम में जी रहा है कि वो जिस दुनियाँ में जी रहा है वो उसकी दुनियाँ है -

एक दुनियाँ है / जिसमें नहीं हूँ मैं / एक दुनियाँ है जिस में नहीं हो तुम /बनायी है उन्होंने / हमारी दुनियाँ / जिस में हर जगह हैं वे / नहीं है पर कहीं भी हम / और हम है कि माने हुए बैठे हैं उस को हमारी दुनिया। [18]

'छीलते हुए अपने को' कविता संग्रह की कविता 'दुस्सह' में स्वतंत्रता के पश्चात जिनके हाथों में यह देश सुपुर्द करते हुए जो सपना स्वतंत्रता सेनानियों ने देखा था। उसका सच समकालीन परिस्थितियों को देखकर लगता है वह सच एक सपना बनकर रह गया है। इस ओर संकेत करते हुए लिखा है कि-

सपना था वह / जो मैंने तुम को दिया / बदले में दिया तुम ने / सच / सच दुस्सह है यह / क्या दुस्सह है सपना भी ? [19]

'जाये नहीं की' कविता में कवि ने शोरगुल की कविता न लिखकर मानव मात्र के आत्मिक परिष्कार, मानव मात्र के आस्तित्विक सवालों से जुड़ी कविता लिखकर अपनी चीख को व्यर्थ (जाये) नहीं किया है।

'ख़ुद भाषा ही' कविता में प्रत्येक राजनेता द्वारा स्वयं को उत्तम दिखाने की होड़ में दूसरों को नीचा दिखाकर कई बार लोगों की नजरों से गिर जाते हैं। जनता इतनी बेवकूफ़ भी नहीं की वो सच नहीं जानती है। वो सब जानती है वक्त आने पर जवाब देती है। श्रेष्ठ बनने के पहले लोगों को ऊपर उठाने की कोशिश करोगे तो जनता तुम्हें स्वयं तख्तेताउस पर बिठा देगी -

स्वयं को हर जगह / जो प्रथम रखते हैं / उत्तम क्या / मध्यम भी नहीं होते / उत्तम की शर्त / अन्य को प्रथम रखना है / ख़ुद भाषा ही / बतला देती है हमें / सुन पायें केवल / भाषा को यदि हम। [20]

'आकाश भटका हुआ' कविता संग्रह की कविता 'कितना शेर कितना चुप' में जन सामान्य की चुप्पी की ओर संकेत करते हुए कवि कहते हैं कि ये चुप भविष्य में बड़े परिवर्तन का संकेत है जो तूफान के आने के पूर्व की शांति सदृश्य है-

कितना शोर / कितनी चुप / शोर बढ़ता जाता जितना / उतना ही घुप / होती जाती है चुप / चुप हूँ मैं / अपनी जान लिये जाने के डर से / शोर मचाता हुआ / - शोर हूँ मैं डरता हुआ / कहीं जान न ले कोई / मेरा खोखल / छुपी हुई है जिसमें / मेरी चुप। [21]

'खो जाता आखिर' कविता में राजनीतिक परिस्थितियों को बदलने के लिए उठे हुए स्वर किसी नई विचारधारा से जुड़कर कुछ बदलाव करने का वादा करते हैं और सत्ता मिलते ही वे भी दूसरी सत्ताधारी पार्टियों सदृश्य व्यवहार करने लगते हैं ऐसी अभिव्यंजना हुई है। 'कहीं तो' कविता में कवि को ये आबोहवा रास नहीं आ रही है इसलिए वे कहीं अकेले बसने के अभिलाषी हैं।

'हवा की मंज़िल नहीं कोई' कविता संग्रह की कविता 'वह कहाँ है दृश्य', 'सच का झूठ', 'झूठ का सच' में राजनीतिक वादों में की गई वो बातें कहाँ है? वो कितनी सच हुई है ? समकालीन समाज में मोहभंग वाली स्थिति पैदा हो गई है। 'क्या मिला' कविता में जन सामान्य ने जो उम्मीद सत्ता से लगाई थी उसकी पूर्ति न होने पर ये आँखें स्वयं मुँद जाना चाहती है। 'भूल भूलैया' कविता में समकालीन परिस्थितियों की ओर संकेत करते हुए अभिव्यक्त पर अंकुश लगाने के संवेदित करते हुए लिखा है कि -

> *रास आया न चुप रहना / न कुछ कहना / कहन का मौन / मौन का कहन : / बस इसी भूलभूलैया में / भटकती रहती है / कविता।* [22]

'गूँगा हो जाना- 'एक' एवं 'दो' कविताओं में राजनीतिक संवेदना को चिह्नांकित किया है। इनमें जुल्मों द्वारा दुनिया को छा लेने की अभिव्यंजना करते हुए लिखा है कि -

> *'गूँगा हो जाना चाहता है / शब्द / नहीं तो भला / कह पायेगा कैसे / इन ज़ुल्मतों को वह / क्या नाम हो उस का / दुनिया छा ली है / ज़ुल्मतों ने जो / गूँगा हो कर ही / अब हो पाएगा / शब्द / कहानी ज़ुल्मतों की / मुझ में व्यक्त।* [23]

निष्कर्ष-

उपर्युक्त विवेचनोपरान्त कहा जा सकता है कि नंदकिशोर आचार्य के काव्य संसार में आर्थिक संवेदना और राजनीतिक संवेदना का प्रासंगिक और सुक्ष्मग्राही संगम लक्षित और अभिव्यंजित हुआ है। समकालीन आर्थिक संवेदना का जो परिदृश्य हमारे समक्ष उपस्थित हो रहा है उसमें अर्थ के प्रभाव से मानवीय जीवन मूल्यों में अनवरत परिवर्तन, धन की धूरी के चारों ओर ही संसार का गतिशील चक्र निरंतर प्रवाहमान है। धनाभाव में मनुष्य ही नहीं राष्ट्रीय विकास भी अवरूद्ध-सा हो जाता है। यह काल अर्थ की प्रधानता का काल है, औद्योगिकीकरण के प्रभाव स्वरूप मानवीय जीवन के आचरण एवं तौर-तरिकों में आमूलचूल परिवर्तन हुआ है, मानवीय मूल्य भी धन के समक्ष बौने महसूस होने लगे हैं। बढ़ते उपयोगितावाद में धन के बल पर ईमान, विश्वास सहज बिकते हुए अनुभूत होते हैं। जिसमें आज का मानव सम्पूर्ण जीवन को थोड़े समय में ही भोग लेने की लालसा एवं अर्थ के चक्कर में इधर-से-उधर घनचक्कर की तरह घूम रहा है। जिसमें मानवता दिवार के किसी अँधेरे कोने में मुँह छुपाए खड़ी महसूस होती है। इसी प्रकार के विचारों- संवेदनाओ, का अन्तःसूत्र नंदकिशोर आचार्य की छोटी-छोटी कविताओं में स्पंदित हुआ हैं।

समकालीन समाज में राजनीति संवेदना इतनी हावी हो गई है कि इसके बारे में विचार किए बिना सामाजिक-सांस्कृतिक-ऐतिहासिक आदि संवेदना के विविध रूपों पर विचार करना भी अधूरा-सा लगता है। इस संवेदना में अराजक तत्त्वों का बढ़ता प्रभाव, चुनाव एवं वोट की राजनीति में गिरते मानवीय मूल्य, मौकापरस्ती, राजनीतिक पार्टियों की अवसरवादी प्रवृत्ति, थोथे भाषणों के चमत्कार से सत्ता पाना, गुटबाजी में पिसता समाज, राजनीतिक अधिकारों का अपनी सुविधानुसार प्रयोग, जन-समुदाय का बढ़ता आक्रोश व अविश्वास, आतंकवाद, पग-पग पर युद्ध की विभिषिका की आहट सुनाई देना आदि से विलग रखते हुए राष्ट्र को एकता के सूत्र में बाँधकर निरन्तर प्रगति के पथ पर आगे बढ़ते रहना सबसे बड़ी चुनौती आज के राजनेताओं, प्रशासकों, समाजवेताओं, साहित्यकारों, समाज चिंतकों आदि पर हैं। इससे नंदकिशोर आचार्य का काव्य संसार निरपेक्ष नहीं रहा है। आर्थिक-राजनीतिक संवेदना के संगम को मानव हृदय के धरातल पर उकेरने का कार्य आचार्य का भावालोक आरंभ से ही लक्षित और अभिव्यंजित करता आ रहा है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1 नंदकिशोर आचार्य : *जल है जहाँ,* सूर्य प्रकाशन मन्दिर, बीकानेर,1980 प्र.सं., 2004, पृष्ठ 42

2 नंदकिशोर आचार्य : *वह एक समुद्र था,* सूर्य प्रकाशन मन्दिर, बीकानेर, अक्टूबर,1982,पृष्ठ 47

3 वही, पृष्ठ 47-48

4 नंदकिशोर आचार्य : *शब्द भूले हुए,* सूर्य प्रकाशन मन्दिर, बीकानेर, 1987, पृष्ठ 36

5 नंदकिशोर आचार्य : *आती है जैसे मृत्यु,* वाग्देवी प्रकाशन, बीकानेर,1990 प्र. सं., 2002, पृष्ठ 59

6 नंदकिशोर आचार्य : *चाँद आकाश गाता है,* वाग्देवी प्रकाशन, बीकानेर, 2008, पृष्ठ 22

7 नंदकिशोर आचार्य : *इतनी शक्लों में अदृश्य,* सूर्य प्रकाशन मन्दिर, बीकानेर, 2012, पृष्ठ 91

8 नंदकिशोर आचार्य : *छीलते हुए अपने को,* वाग्देवी प्रकाशन, बीकानेर, 2013, पृष्ठ 44

9 नंदकिशोर आचार्य : *मुरझाने को खिलाते हुए,* सूर्य प्रकाशन मन्दिर, बीकानेर, 2014, पृष्ठ 29

10 नंदकिशोर आचार्य : *जल है जहाँ,* सूर्य प्रकाशन मन्दिर, बीकानेर,1980 प्र.सं., 2004, पृष्ठ 22-23

11 वही, पृष्ठ 23

12 नंदकिशोर आचार्य : *वह एक समुद्र था,* सूर्य प्रकाशन मन्दिर, बीकानेर, अक्टूबर,1982,पृष्ठ 49

13http://kavitakosh.org/kk/%E0%A4%B8%E0%A4%BE%E0%A4%81%E0%A4%AA_/_%E0%A4%85%E0%A4%9C%E0%A5%8D%E0%A4%9E%E0%A5%87%E0%A4%AF (http::://kavitakosh.org/kk/साँप_/_अज्ञेय)
14 नंदकिशोर आचार्य : *आती है जैसे मृत्यु,* वाग्देवी प्रकाशन, बीकानेर,1990 प्र. सं., 2002, पृष्ठ 63
15 नंदकिशोर आचार्य : *अन्य होते हुए,* वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, 2007, पृष्ठ 47
16 नंदकिशोर आचार्य : *चाँद आकाश गाता है,* वाग्देवी प्रकाशन, बीकानेर, 2008, पृष्ठ 41
17 नंदकिशोर आचार्य : *इतनी शक्लों में अदृश्य,* सूर्य प्रकाशन मन्दिर, बीकानेर, 2012, पृष्ठ 104
18 वही, पृष्ठ 80
19 नंदकिशोर आचार्य : *छीलते हुए अपने को,* वाग्देवी प्रकाशन, बीकानेर, 2013, पृष्ठ 65
20 वही, पृष्ठ 67
21 नंदकिशोर आचार्य : *आकाश भटका हुआ,* वाग्देवी प्रकाशन, बीकानेर, 2015, पृष्ठ 37
22 नंदकिशोर आचार्य : *हवा की मंज़िल नहीं कोई,* सूर्य प्रकाशन मन्दिर, बीकानेर, 2016, पृष्ठ 70
23 नंदकिशोर आचार्य : *अपराह्न,* सूर्य प्रकाशन मन्दिर, बीकानेर, 2018, पृष्ठ 363